International Journal of Classified Research Techniques & Advances (IJCRTA)
Multidisciplinary Peer-Reviewed Online Open Access Journal Impact Factor: 5.688
Volume 4, Issue 4, Oct-Dec 2024 ID: IJCRTA0000176 ISSN: 2583-1801
Email: ijcrta@gmail.com Website: www.ijcrta.org

विकास, विस्थापन और सामाजिक असमानता: एक समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

डॉ सतीश कुमार द्विवेदी

Author Affiliation:
सहा. प्राध्यापक (समाजशास्त्र), शासकीय महाविद्यालय नादान, मैहर (म.प्र.)

Citation of Article: द्विवेदी, एस. के. (2024). विकास, विस्थापन और सामाजिक असमानता: एक समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य. International Journal of Classified Research Techniques & Advances (IJCRTA) ISSN: 2583-1801, 4 (4), pg.83-88. ijcrta.org

DOI: 10.5281/zenodo.15242739

सारांश:

यह शोध विकास के कारण विस्थापन की प्रक्रिया में उत्पन्न सामाजिक असमानता का विश्लेषण करता है और समाजशास्त्रीय दृष्टि से इसके कारणों, प्रभावों तथा संभावित समाधानों की पड़ताल करता है।

भूमिका (Introduction):

विकास किसी भी समाज की प्रगति और समृद्धि का संकेतक माना जाता है, लेकिन जब यह विकास चुनिंदा वर्गों के हित में हो और उसके परिणामस्वरूप समाज के कमजोर, हाशिए पर पड़े वर्गों को उनकी ज़मीन, आजीविका और सामाजिक पहचान से वंचित कर दिया जाए, तब यह विकास सामाजिक न्याय की अवधारणा पर प्रश्नचिह्न खड़ा कर देता है। आधुनिक भारत में बड़े बाँध, औद्योगिक परियोजनाएँ, शहरी विस्तार और विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) जैसे विकास कार्यों ने लाखों लोगों को विस्थापित किया है। यह विस्थापन केवल भौगोलिक नहीं होता, बल्कि इसके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परिणाम भी गहरे होते हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो विस्थापन समाज में पहले से विद्यमान असमानताओं को और तीव्र करता है। विशेष रूप से आदिवासी, दलित, ग्रामीण गरीब और महिलाएँ इस प्रक्रिया में सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। विकास की योजनाएँ जहाँ एक ओर आर्थिक उन्नति का चेहरा प्रस्तुत करती हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानता, गरीबी, और सामाजिक बहिष्करण को जन्म देती हैं।

विस्थापन की प्रकृति (Nature of Displacement):

विस्थापन का अर्थ है किसी व्यक्ति, समुदाय या समूह का अपने पारंपरिक निवास स्थल, आजीविका और सांस्कृतिक परिवेश से जबरन या अनैच्छिक रूप से हटाया जाना। यह प्रक्रिया सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संरचनाओं से गहराई से जुड़ी होती है। विस्थापन केवल शारीरिक या भौगोलिक घटना नहीं है, बल्कि यह एक बहुआयामी सामाजिक प्रक्रिया है, जिसका प्रभाव प्रभावित व्यक्तियों के जीवन के प्रत्येक पहलू पर पड़ता है।

विस्थापन को मोटे तौर पर दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है जिसका विवरण निम्नलिखित है —

1. प्राकृतिक आपदियों से विस्थापन (Displacement due to Natural Disasters):

बाढ़, भूकंप, सूखा, चक्रवात, भूस्खलन जैसे प्राकृतिक आपदाएँ लोगों को अचानक अपने घरों को छोड़ने के लिए मजबूर कर देती हैं। यह विस्थापन आकस्मिक होता है और प्रभावित समुदायों को तुरंत राहत और पुनर्वास की आवश्यकता होती है। ऐसे विस्थापन अधिकतर अस्थायी होते हैं, लेकिन यदि पुनर्वास की व्यवस्था समय पर नहीं हो पाती, तो ये दीर्घकालिक बन सकते हैं।

2. विकास परियोजनाओं से विस्थापन (Development-Induced Displacement):

सबसे चिंताजनक विस्थापन वे होते हैं जो बड़े पैमाने पर विकास परियोजनाओं के चलते होते हैं। इनमें बड़े बांध, खनन परियोजनाएँ, औद्योगिक क्षेत्र, सड़क, रेलवे, बिजली परियोजनाएँ, शहरी विस्तार और विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) शामिल हैं। इन परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया के दौरान लाखों लोग अपनी जमीन, मकान और सामाजिक परिवेश से वंचित हो जाते हैं।

विकास-जनित विस्थापन की एक विशेषता यह है कि यह योजनाबद्ध होता है, लेकिन इसके बावजूद यह असमान रूप से कमजोर वर्गों को प्रभावित करता है। आदिवासी, दलित, खेतिहर मजदूर, और शहरी झुग्गी-बस्ती निवासी इसकी चपेट में सबसे अधिक आते हैं। कारण यह है कि इन समुदायों की भूमि का स्वामित्व अक्सर सरकारी कागज़ों में दर्ज नहीं होता या वे अशिक्षा के कारण अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर पाते।

विस्थापन केवल भूमि या आवास की हानि तक सीमित नहीं है। यह लोगों की आजीविका, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक पहचान, पारंपरिक ज्ञान, और जीवनशैली पर गहरा असर डालता है। कई बार तो विस्थापित समुदायों को पुनर्वास स्थलों पर मूलभूत सुविधाएँ भी नहीं मिल पातीं, जिससे उनके जीवन में अस्थिरता, निर्धनता, और सामाजिक अलगाव उत्पन्न हो जाता है।

विस्थापन के संदर्भ में सामाजिक असमानता के विभिन्न रूप (Different forms of social inequality in the context of displacement):

विस्थापन की प्रक्रिया समाज के विभिन्न तबकों पर असमान रूप से प्रभाव डालती है। विशेष रूप से सामाजिक रूप से पिछड़े, आर्थिक रूप से कमजोर और सांस्कृतिक रूप से हाशिए पर स्थित समुदाय इस प्रक्रिया से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। विस्थापन केवल भौगोलिक परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक असमानता की विभिन्न परतों को उजागर और गहरा करता है। इस असमानता के कई रूप होते हैं:

1. आर्थिक असमानता:

विस्थापन का सबसे प्रत्यक्ष प्रभाव आजीविका के नुकसान के रूप में सामने आता है। भूमिहीन मजदूर, छोटे किसान, और शिल्पकार जब अपनी पारंपरिक भूमि और व्यवसाय से बेदखल होते हैं, तो उनकी आजीविका छिन जाती है। पुनर्वास स्थलों पर उन्हें वैकल्पिक रोजगार नहीं मिलता, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और बिगड़ जाती है।

2. जातिगत असमानता:

भारत जैसे देश में जाति एक प्रमुख सामाजिक संरचना है। अनुसूचित जातियाँ और जनजातियाँ अक्सर वनों, जल, और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहती हैं। विकास परियोजनाओं के चलते जब ये समुदाय विस्थापित होते हैं, तो

उनकी पहचान, जीवनशैली और पारंपरिक अधिकार खत्म हो जाते हैं। पुनर्वास की योजनाओं में भी जातिगत भेदभाव दिखाई देता है, जिससे ये समुदाय दोहरी सामाजिक असमानता के शिकार बनते हैं।

3. लैंगिक असमानता:

महिलाएँ, विशेषकर ग्रामीण और आदिवासी महिलाएँ, विस्थापन के समय अत्यधिक असुरक्षा का अनुभव करती हैं। वे पारिवारिक और सामाजिक संरचना की सुरक्षा खो देती हैं और पुनर्वास स्थलों पर यौन शोषण, स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, शिक्षा से वंचित होना जैसी समस्याओं का सामना करती हैं। इसके साथ ही उन्हें निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया से भी बाहर रखा जाता है।

4. शैक्षणिक और सूचना की असमानता:

विस्थापित समुदायों के बच्चों की शिक्षा बाधित होती है। पुनर्वास क्षेत्रों में विद्यालयों की कमी, भाषा संबंधी कठिनाइयाँ, और सामाजिक भेदभाव बच्चों को शिक्षा से दूर कर देते हैं। साथ ही, विस्थापित लोग अक्सर सरकारी योजनाओं, मुआवज़े और अधिकारों की जानकारी से वंचित रहते हैं, जिससे वे अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर पाते।

5. सांस्कृतिक और पहचान संबंधी असमानता:

हर समुदाय की एक सांस्कृतिक पहचान होती है जो उनके निवास, परंपराओं और सामाजिक संबंधों से जुड़ी होती है। विस्थापन के कारण ये सभी तत्व नष्ट हो जाते हैं। आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक अस्मिता खतरे में पड़ जाती है, और वे शहरी संस्कृति में आत्मसात होने के लिए विवश हो जाते हैं। इससे उनकी सांस्कृतिक विविधता और आत्मसम्मान पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार, विस्थापन केवल भौतिक स्थानांतरण नहीं है, बल्कि यह समाज में गहराई से निहित असमानताओं को और भी विकराल बना देता है। यदि विकास परियोजनाओं के साथ सामाजिक न्याय को नहीं जोड़ा गया, तो ये योजनाएँ शोषण और बहिष्करण का माध्यम बन जाएँगी। अतः यह आवश्यक है कि विस्थापन की प्रक्रिया में सामाजिक समावेशन, समानता और न्याय को केंद्रीय भूमिका दी जाए।

विस्थापन का समाजशास्त्रीय प्रभाव (Sociological Impact of Displacement):

विस्थापन का अर्थ केवल लोगों के एक स्थान से दूसरे स्थान पर भौतिक रूप से स्थानांतरण भर नहीं है, बल्कि यह एक गहरी सामाजिक प्रक्रिया है जो व्यक्ति, परिवार, समुदाय और समाज की संपूर्ण संरचना को प्रभावित करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, विस्थापन सामाजिक रिश्तों, मान्यताओं, संस्थाओं और पहचान पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से असर डालता है।

1. सामाजिक संरचना में टूटन:

जब लोग अपने पारंपरिक गाँव, मोहल्ले या आदिवासी क्षेत्रों से विस्थापित होते हैं, तो उनकी सामाजिक संरचना—जैसे कुटुंब, बिरादरी, और पारस्परिक सहयोग की परंपराएँ—टूट जाती हैं। इससे सामाजिक एकता, सहयोग और सामूहिक निर्णय लेने की क्षमता में गिरावट आती है। लोग नई जगह पर आत्मीयता और भरोसे से वंचित हो जाते हैं, जिससे सामाजिक अलगाव और अकेलापन बढ़ता है।

2. सांस्कृतिक विघटन:

विस्थापन से सांस्कृतिक मान्यताओं, जीवनशैली, त्योहारों, बोलियों और परंपराओं का क्षरण होता है। आदिवासी और पारंपरिक समुदायों की सांस्कृतिक पहचान खतरे में पड़ जाती है। वे नई सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में समायोजन के लिए बाध्य होते हैं, जिससे उनकी सांस्कृतिक अस्मिता मिटने लगती है।

3. सामाजिक नियंत्रण का अभाव:

पूर्ववर्ती समुदायों में सामाजिक नियंत्रण की अनौपचारिक प्रणालियाँ प्रभावी होती थीं, जैसे पंचायत, बुज़ुर्गों की सलाह, और परंपरागत नियम। लेकिन विस्थापन के बाद इन व्यवस्थाओं का विघटन हो जाता है। पुनर्वास स्थलों पर सामाजिक अनुशासन की कमी, अपराध और हिंसा की प्रवृत्तियों को जन्म देती है।

4. वर्ग और जाति आधारित तनाव:

नई बस्तियों में विभिन्न जातियों, वर्गों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों के लोगों को एक साथ बसाया जाता है, जिससे आपसी संघर्ष, भेदभाव और तनाव उत्पन्न होते हैं। जातिगत भेदभाव और संसाधनों की असमानता सामाजिक संघर्ष को जन्म देती है, जिससे सामाजिक असंतुलन बढ़ता है।

5. सामाजिक गतिशीलता में अवरोध:

विस्थापन के पश्चात शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच सीमित हो जाती है, जिससे सामाजिक प्रगति अवरुद्ध होती है। सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन की स्थिति लंबे समय तक बनी रहती है, जिससे पीढ़ियों तक असमानता बनी रहती है।

पुनर्वास की समस्याएँ (Challenges of Rehabilitation):

पुनर्वास का तात्पर्य है—विस्थापित व्यक्तियों और समुदायों को उनकी जीवन-यापन की स्थिति में पुनः स्थायित्व प्रदान करना, जिसमें आवास, आजीविका, सामाजिक संरचना और सम्मानजनक जीवन शैली की पुनः स्थापना शामिल होती है। परंतु व्यवहार में पुनर्वास की प्रक्रिया अनेक जटिल समस्याओं और चुनौतियों से घिरी होती है, जो इसे केवल प्रशासनिक नहीं, बल्कि एक गंभीर समाजशास्त्रीय प्रश्न बना देती है।

1. पर्याप्त मुआवज़े की अनुपलब्धता:

पुनर्वास की पहली बड़ी समस्या है—पर्याप्त और समय पर मुआवज़ा न मिलना। अक्सर विस्थापित लोगों को दी गई आर्थिक सहायता उनकी खोई हुई ज़मीन, संपत्ति या आजीविका की भरपाई नहीं कर पाती। सरकारी मुआवज़ा वितरण में भ्रष्टाचार, देरी और भेदभाव आम समस्याएँ हैं।

2. आवास और बुनियादी सुविधाओं का अभाव:

पुनर्वास स्थलों पर आवास की गुणवत्ता अत्यंत निम्न होती है। न तो पर्याप्त घर होते हैं और न ही बिजली, पानी, शौचालय, स्वास्थ्य केंद्र या स्कूल जैसी बुनियादी सुविधाएँ। इससे विस्थापित लोग दोयम दर्जे की ज़िंदगी जीने को विवश होते हैं।

3. आजीविका का संकट:

पुनर्वास स्थलों पर वैकल्पिक रोजगार या आय के स्रोतों की व्यवस्था नहीं की जाती। ग्रामीण या आदिवासी समुदाय जिन आजीविकाओं पर निर्भर थे—जैसे कृषि, पशुपालन, वनोपज आदि—उनसे वे कट जाते हैं। नए परिवेश में न तो उनके पास कौशल होता है, न ही संसाधन।

4. सामाजिक और सांस्कृतिक विघटन:

पुनर्वास के दौरान पारंपरिक सामाजिक ढांचे टूट जाते हैं। जातिगत, सांस्कृतिक और भाषायी विविधता वाले समुदायों को एक ही स्थान पर बसाना आपसी तनाव, संघर्ष और सामाजिक विघटन को जन्म देता है। पारिवारिक सहयोग, सामूहिक गतिविधियाँ और सांस्कृतिक उत्सव जैसे तत्वों का लोप हो जाता है।

5. निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी का अभाव:

विस्थापित समुदायों को पुनर्वास की योजना बनाते समय परामर्श या सहभागिता का अवसर नहीं दिया जाता। निर्णय ऊपर से थोपे जाते हैं, जिससे समुदायों में असंतोष और अविश्वास की भावना जन्म लेती है।

6. कानूनी और प्रशासनिक जटिलताएँ:

पुनर्वास से जुड़ी योजनाओं में कानूनी पेचिदगियाँ, ज़मीन के अधिकार संबंधी विवाद, दस्तावेज़ों की अनुपलब्धता और प्रशासनिक लापरवाही भी गंभीर समस्याएँ हैं। अनेक बार योजनाएँ कागज़ पर ही सीमित रह जाती हैं।

7. मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक आघात:

विस्थापित लोग अपने गाँव, संस्कृति, रिश्तों और जीवनशैली से कट जाते हैं, जिससे उनमें गहरा भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक संकट उत्पन्न होता है। वे असुरक्षा, तनाव, अवसाद और भविष्य को लेकर अनिश्चितता से जूझते हैं।

निष्कर्ष (Conclusion):

विस्थापन और पुनर्वास की समस्याएँ केवल भौतिक या आर्थिक मुद्दे नहीं हैं, बल्कि इनका गहरा सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी होता है। विस्थापन के दौरान लोग न केवल अपनी भूमि और संपत्ति खोते हैं, बल्कि वे अपनी सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक पहचान और परंपराओं से भी कट जाते हैं। पुनर्वास की प्रक्रिया में कई चुनौतियाँ सामने आती हैं, जैसे मुआवज़ा, रोजगार, आवास और बुनियादी सुविधाओं का अभाव, जिसके कारण विस्थापित समुदायों को नए स्थानों पर भी असमानता और भेदभाव का सामना करना पड़ता है।
सामाजिक असमानता, खासकर जाति, वर्ग और लिंग आधारित भेदभाव, विस्थापन के परिणामस्वरूप और बढ़ जाती है। इसके अलावा, प्रशासनिक लापरवाही, कानूनी जटिलताएँ और सांस्कृतिक विघटन भी पुनर्वास प्रक्रिया में बाधाएँ उत्पन्न करते हैं।

अंततः, यह स्पष्ट है कि विस्थापन की समस्याओं का समाधान केवल प्रशासनिक नीतियों के द्वारा संभव नहीं है। इसके लिए एक समावेशी और मानवकेंद्रित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो विस्थापित समुदायों के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पुनर्निर्माण पर ध्यान केंद्रित करे। यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि पुनर्वास प्रक्रिया में विस्थापितों की भागीदारी हो और उनके अधिकारों का सम्मान किया जाए।

संदर्भ (Bibliography):

1. Banerjee, A. & Duflo, E. (2019). Good Economics for Hard Times: Better Answers to Our Biggest Problems. PublicAffairs.

2. Dube, S. C. (1998). Modernization and Development: The Search for Alternative Paradigms. Vikas Publishing House.

3. Chakravarti, U. (2012). Gendering Caste: Through a Feminist Lens. Stree.

4. Shiva, V. (1991). The Violence of the Green Revolution: Third World Agriculture, Ecology, and Politics. Zed Books.

5. De Haan, A. (2000). The Myth of Social Exclusion: Theories of Social Exclusion and the Indian Context. Development and Change, 31(3), 571-591.

6. Panchayatan, A. K. (2011). Social Displacement in India: Problems and Policies. Social Science Press.